22

अष्टाध्यायी का सप्तम अध्याय

इस पाठ में अष्टाध्यायी के सातवें अध्याय के कुछ सूत्रों की व्याख्या करेंगे। इस पाठ में वेद में जो ये अनङादेश विषय में और इडागमविषय में इडागमनिषेधविषय में और जस्वादेशविषय में कुछ विशिष्ट नियम है उनकी आलोचना करते हैं। वेद में कैसे जस्प्रत्यय का असुगागम होता है ऐसा कहते है। उससे देवाः इसको देवासः यह वैदिकरूप कैसे होते हैं यह भी बताया गया है। श्रीशब्द को और ज्ञानशब्द को नुडागम कैसे होता है इसका भी प्रतिपादन करेंगे। पादान्त में स्थित गोशब्द को नुडागमविषय में नियमो को कहेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे–

- वेद में असुगागम को जान पाने में;
- श्री और ज्ञान शब्द को नुडागमविषय के नियमों को जान पाने में;
- अस्थिदध्यादीनां को कैसे द्विवचन में ईकार होता है उसको जान पाने में;
- ऋकारान्त धातु को कैसे उकार होता है इस को जान पाने में।

22.1 आज्जसेरसुक्॥ (7.1.50)

सूत्रार्थ– अवर्णान्ताद अङ्ग से उत्तर जस को असुक् हो।

सूत्रव्याख्या– यह विधिसूत्र है। आत् जसेः असुक् ये सूत्रगत पदच्छेद है। आत् यह पञ्चम्यन्त पद है, जसेः यह षष्ठ्यन्त पद है, असुक् यह प्रथमान्त पद है। क्वाऽपि छन्दसि इस

सूत्र से छन्दसि इस की अनुवृति है। अङ्गस्य इसका अधिकार है, और वह पञ्चमी का विपरिणाम है। अ-शब्द के पञ्चमी एकवन आत् इस पद की अनुवृति है। और उसका अवर्णा से यह अर्थ है। आत् यह अङ्गस्य इसका विशेषण है इसलिए येन विधि स्तदन्तस्य इस परिभाषा से तदन्तग्रहण होता है, और उससे अवर्णान्त अङ्ग से यह अर्थ प्राप्त होता है। आत् यह पञ्चम्यन्त होने से तस्मादित्युत्तरस्य इस परिभाषा से परे का यह अर्थ प्राप्त होता है। उससे सूत्र का अर्थ होता है छन्द विषय में अवर्णान्त अङ्ग से परे जसे को (जस:) असुगागम होता है।

उदाहरण- देवास:

सूत्रार्थसमन्वय– देवशब्द का प्रथमा बहुवचन की विवक्षा में जस्प्रत्यय करने पर अनुबन्ध लोप होने पर देव अस् इस स्थिति में अङ्गसंज्ञक देवशब्द की आद्यन्तौ टकितौ इस परिभाषा के द्वारा परिष्कार होने से प्रकृतसूत्र से असुगागम और अनुबन्धलोप होने पर कित्त्व अन्त्यावयव होने से देव अस् अस् इस स्थिति में वकार से उत्तर अकार को और अस के अकार को सवर्णदीर्घ होने आकार होने पर देवासस् इस स्थिति में सकार को रुत्व विसर्ग होने पर **देवास:** यह रूप सिद्ध होता है। इसी प्रकार **ब्राह्मणास:** यह रूप सिद्ध होता है। लोक में तो यथाक्रम **देवा:, ब्राह्मणा:** यह प्रयोग होता है।

22.2 श्रीग्रामण्योश्छन्दसि॥ (7.1.56)

सूत्रार्थ– छन्द में श्री ग्रामणी (पद के) आम को नुट् (आगम होता है)।

सूत्रव्याख्या– यह विधिसूत्र है। श्रीग्रामण्यो: यह षष्ठ्यन्त पद है। छन्दसि यह सप्तम्यन्त पद है। ह्रस्वनद्यापो नुट् इस सूत्र से नुट् इसकी अनुवृति है। आमि सर्वनाम्न: सुट् इस सूत्र से आमि इसकी अनुवृति है। अङ्गस्य इसकी अनुवृत्ति आती है। नुट के उकारटकार की इत्सज्ञा होती है। और टित्त्व होने से नुट् आदि अवयव को होता है। उससे सूत्र का अर्थ होता है श्रीशब्द और ग्रामणी शब्द के परे आम को छन्द विषय में नुडागम होता है।

उदाहरण- श्रीणामुदारो धारुणो रयीणाम्।

सूत्रार्थसमन्वय– श्रीशब्द से आम करने पर श्री आम् इस स्थिति में वाऽमि इस सूत्र से विकल्प से नदीसंज्ञक होती है और उससे ह्रस्वनद्यापो नुट् इस सूत्र से नुडागम सिद्ध होता है। किन्तु नदीसंज्ञा अभावपक्ष में नुट की प्राप्ति नहीं होती है इसलिए **श्रीग्रामण्योश्छन्दसि** इस सूत्र से नुट् का विधान करते है नुट करने पर अनुबन्धलोप होने पर नुट के टित्त्व आद्यावयव को होने पर श्री न आम् इस स्थिति में रकार से परे नकार का अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि इस सूत्र से णत्व और प्रकियाकार्य करने पर श्रीणाम् यह रूप सिद्ध होता है।

22.3 गोः पादान्ते॥ (7.1.57)

सूत्रार्थ- गो इससे उत्तर आम को नुडागम हो पादान्त में।

सूत्रव्याख्या– यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में दो पद है। गोः पादान्ते ये सूत्रगत पदच्छेद है। गोः यह पञ्चम्यन्त पद है, पादान्ते यह सप्तम्यन्त पद है। गोः यह पञ्चम्यन्त होने से तस्मादित्युत्तरस्य इस परिभाषा से उत्तर यह अर्थ प्राप्त होता है। पादान्ते यह वैषयिक सप्तमी है इसलिए पादान्तविषय में गो के परे आम को नुडागम हो यह सूत्र का अर्थ होता है। नुट के उकार और टकार की इत्सञ्ज्ञा होती है। नुट के टित्त्व करने से स्थानि के आदि अवयव को हो उसके लिए।

उदाहरण- विद्मा हि त्वा गोपतिं शूर गोनाम्।

सूत्रार्थसमन्वय– यहाँ गोनाम् यह शब्द पादान्त में है इसलिए गो आम् इस स्थिति मं आद्यन्तौ टकितौ इस परिभाषा से परिष्कार करने पर प्रकृतसूत्र से नुडागम और अनुबन्ध लोप होने पर गो न् आम् इस स्थिति में प्रक्रिया करने पर **गोनाम्** यह रूप सिद्ध होता है।

विशेष– सूत्र में पादान्ते यह कहा है इसलिए गोशब्द पादान्त में न हो तो नुडागम नहीं होता है। जैसे गवां शता पृक्षयामेषु यहाँ पर गोशब्द पादान्त में नहीं है इसलिए गोशब्द से नुट् नहीं होता है। कही पर पादान्त में होने पर नुडागम नहीं होता है जैसे विराजं गोपति गवाम् यहाँ पर छन्द विषय में सभी वैकल्पिक होने से उसकी व्याख्या करते है।

22.4 छन्दस्यपि दृश्यते॥ (7.1.76)

सूत्रार्थ– अस्थ्यादि को अनङ् हो।

सूत्रावतरण- लोक में अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्णाम् अजादि तृतीयादि विभक्ति के परे अनङ्-आदेश होता है। इसलिए छन्द विषय में उन शब्दो की अजादिविभक्ति के परे तथा हलादिविभक्ति को भी अनङ् हो उसके लिए इस सूत्र की रचना की है।

सूत्रव्याख्या– यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से अनङादेश का विधान करते है। इस सूत्र में छन्दसि यह विषय सप्तम्यन्त पद है, अपि यह अव्यय, और दृश्यते यह तिङन्त पद है। यहाँ अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्णामनङुदात्तः इस सूत्र से अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्णाम् इस षष्ठीबहुवचनान्त पद, अनङ् इस प्रथमान्त पद की, और उदात्तः इस प्रथमान्त स्वरबोधक पद की अनुवृति है। और इस प्रकार यहाँ पदयोजना- छन्दसि अपि अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्णाम् उदात्तः अनङ् दृश्यते इति। यहाँ हलादि विभक्ति के परे भी अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्ण को अनङादेश देखा जाता है यह विशेष है। उससे सूत्रार्थ होता है– छन्द विषय में अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्ण शब्दो को भी अनङादेश हो और वह उदात्त हो। अनङ् के ङित्करने से और ङिच्च इससे

टिप्पणी

अनङ् अन्त्यादेश होता है ऐसा जानना चाहिए।

उदाहरण- इन्द्रो दधीचो अस्थभिः।

सूत्रार्थसमन्वय- अस्थि-शब्द से तृतीयाबहुवचन की विवक्षा में भिस्-प्रत्यय करने पर अस्थि भिस् इस स्थिति में अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्णामनङुदात्तः इस सूत्र से अनङादेशाभाव करने पर प्रकृतसूत्र से अस्थि-शब्द के इकार के स्थान में अनङादेश और अनुबन्धलोप होने पर अस्थन् भिस् इस स्थिति में नलोपः प्रातिपदिकान्तस्य इस सूत्र से नकार का लोप होने पर अस्थ भिस् इस स्थिति में और विभक्तिकार्य करने पर **अस्थभिः** यह रूप सिद्ध होता है। लोक में तो **अस्थिभिः** यह रूप होता है।

22.5 ई च द्विवचने॥ (7.1.77)

सूत्रार्थ– छन्द में अच और (हल) तृतीयादि द्विवचन में अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्णाम् ई (आदेश) होता है।

सूत्रावतरण- छन्द में अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्ण शब्दो को द्विवचन परे ई-इत्यादेशविधान करने के लिए इस सूत्र की रचना की है।

सूत्रव्याख्या– यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से ईकारादेश होता है। तीन पद वाले इस सूत्र में ई यह प्रथमान्त पद, च यह अव्यय, द्विवचने यह सप्तम्यन्त पद है। इस सूत्र में छन्दस्यपि दृश्यते इस सूत्र से छन्दसि इस विषयसप्तम्यन्त पद की, अस्थिदधि सक्थ्यक्ष्णामनङुदात्तः इस सूत्र से अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्णाम् इस षष्ठ्यन्त पद, अनङ् इस प्रथमान्त पद की, उदात्तः इस प्रथमान्त पद की अनुवृति है। उससे यहाँ पदयोजना- छन्दसि अस्थिदधि सक्थ्यक्ष्णां द्विवचने च ई इति। इस सूत्र में किस प्रकार के द्विवचन की विवक्षा करते है तो कहते है– यहाँ इकोऽचि नुम्विभक्तौ इस सूत्र से विभक्तौ यह सप्तम्यन्त पद, रधि-जभोरचि इस सूत्र से अचि यह सप्तम्यन्त पद, तृतीयदिषु भाषितपुंस्कं पुंवद्गालवस्य इस सूत्र से तृतीयादिषु यह सप्तमीबहुवचनान्त पद का यहाँ अनुवर्तन करना चाहिए। उससे सूत्रार्थ है- छन्द विषय में अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्ण शब्दों को अजादि और हलादि तृतीयादि विभक्ति द्विवचन में ईकारादेश होता है। और यह आदेश अलोऽन्त्यस्य इस परिभाषा से अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्ण शब्दों के अन्त्य अल के स्थान में ही होता है।

उदाहरण- अक्षीभ्याम्।

सूत्रार्थसमन्वय- अक्षि-शब्द की प्रातिपदिकसंज्ञा होने पर उससे तृतीयाद्विवचन की विवक्षा में भ्याम्-प्रत्यय करने पर अक्षि भ्याम् इस स्थिति में प्रकृतसूत्र से इकार के स्थान में ईकार करने पर अक्षी भ्याम् इस स्थिति में और सभी वर्णो के मिलाने पर **अक्षीभ्याम्** यह रूप सिद्ध होता है।

22.6 बहुलं छन्दसि॥ (7.1.103)

सूत्रार्थ- छन्द विषय में ऋकारान्त धातु के अङ्ग को बहुल करके उकारादेश होता है।

सूत्रावतरण- छन्द में ऋकारान्त धातु के अङ्ग को बहुल अर्थ में उकारादेशविधान करने के लिए इस सूत्र की रचना की है।

सूत्रव्याख्या- यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से उकारादेश का विधान है। इस सूत्र में बहुलम् यह प्रथमान्त पद, और छन्दसि यह सप्तम्यन्त पद है। इस सूत्र में ऋत इद् धातोः इस सूत्र से ऋतः, और धातोः इन षष्ठ्यन्त पद, उदोष्ठ्यपूर्वस्य इस सूत्र से उत् इस प्रथमान्त पद की अनुवृति है। अङ्गस्य इस षष्ठ्यन्त पद का अधिकार है। और इस प्रकार यहाँ पदयोजना- छन्दसि ऋतः धातोः अङ्गस्य बहुलम् उत् इति। ऋतः यह धातोः इसका विशेषण है इसलिए ऋदन्त धातु से यह अर्थ प्राप्त होता है। उससे सूत्रार्थ होता है- छन्द विषय में ऋदन्त धातु के अङ्ग को बहुल करके उकारादेश होता है।

उदाहरण- ततुरिः।

सूत्रार्थसमन्वय- तृ-धातु से किन्-प्रत्यय करने पर और उसको धातोः द्विर्वचनेऽचि इस सूत्र से स्थानिवद्भाव करने पर द्वित्व होने पर तृ तृ इ इस स्थिति में पूर्व तृ-इसकी अभ्याससंज्ञा होने पर और उसके अभ्यास के ऋकार के स्थान में उरत् इस सूत्र से रपर अकार करने पर तर् तृ इ इस स्थिति में हलादिः शेषः इससे अभ्यास के रेफ का लोप होने पर त तुर् इ इस स्थिति में प्रकृतसूत्र से ऋकार के स्थान में रपर उकार करने पर त तुर् इ इस स्थिति में सभी वर्णों के मिलाने पर ततुरि यह समुदाय रूप होता है। और उस समुदाय के कृदन्त होने से कृत्तद्धितसमासाश्च इससे प्रातिपदिकसंज्ञा होने पर और विभक्तिकार्य करने पर ततुरिः यह रूप सिद्ध होता है।

22.7 ह्रु ह्वरेश्छन्दसि॥ (7.2.31)

सूत्रार्थः- ह्वृ को निष्ठा में ह्रु आदेश हो।

सूत्रव्याख्या- यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से ह्वृ-धातु के स्थान में ह्रु-इत्यादेश का विधान करते है। इस सूत्र में ह्रु यह प्रथमान्त पद, ह्वरेः यह षष्ठ्यन्त पद, छन्दसि यह सप्तम्यन्त पद है। यहाँ श्वीदितो निरूठायाम् इस सूत्र से निष्ठायाम् इस सप्तम्यन्त पद की अनुवृति है। और इस प्रकार यहाँ पदयोजना- छन्दसि ह्वरेः ह्रु निष्ठायाम्। यहाँ निष्ठापद से क्तः क्तवतुः इन दो प्रत्ययो का ग्रहण है। और इस प्रकार सूत्रार्थ होता है- छन्द विषय में निष्ठा के परे ह्वृ-धातु के स्थान पर ह्रु-इत्यादेश होता है।

उदाहरण - अह्रुतम्।

सूत्रार्थसमन्वय- ह्वृ-धातु से निष्ठासंज्ञक क्तप्रत्यय करने पर अनुबन्धलोप करने पर ह्वृ

त इस स्थिति में प्रकृतसूत्र से ह्वृ-धातु के स्थान पर ह्रु-इत्यादेश होने पर और विभक्तिकार्य करने पर ह्रुतम् यह रूप बनता है। उससे न ह्रुतम् ऐसा विग्रह करने पर नञ्तत्पुरुषसमास करने पर और विभक्ति कार्य करने पर **अह्रुतम्** यह रूप सिद्ध होता है।

विशेष- क्त क्तवतू निष्ठा इस सूत्र से क्तप्रत्यय की और क्तवतुप्रत्यय की निष्ठासंज्ञा होती है।

22.8 ग्रसित-स्कभित-स्तभितोत्तभित-चत्त-विकस्ता-विशस्तृ-शंस्तृ-शास्तृ-तरुतृ- तरूतृ-वरुतृ-वरूतृ-वरूत्री-रुज्वलिति-क्षरिति-वमित्यमितीति च॥ (7.2.34)

सूत्रार्थ– इन अट्ठारह रूपों का निपातन करते है।

सूत्राव्याख्या– यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से ग्रसितादिरूपो का निपातन विधान करते है। यहाँ ग्रसित-स्कभित-स्तभितोत्तभित-चत्त-विकस्ता-विशस्तृ-शंस्तृ-शास्तृ-तरुतृ- तरूतृ-वरुतृ-वरूतृ-वरूत्री-रुज्वलिति-क्षरिति-वमित्यमिति इति च ये पदच्छेद है। इस सूत्र में ग्रसित-स्कभित-स्तभितोत्तभित-चत्त-विकस्ता-विशस्तृ-शंस्तृ-शास्तृ-तरुतृ-तरूतृ-वरुतृ-वरूतृ-वरूत्री-रुज्वलिति-क्षरिति-वमित्यमिति ये प्रथमान्त समस्त पद है, इति यह अव्यय और च यह भी अव्यय। ह्रु ह्वरेश्छन्दसि इस सूत्र से यहाँ छन्दसि इ सप्तम्यन्त पद की अनुवृति है। और यहाँ पदयोजना- छन्दसि ग्रसित-स्कभित-स्तभितोत्तभित-चत्त-विकस्ता-विशस्तृ- शंस्तृ-शास्तृ-तरुतृ-तरूतृ-वरुतृ-वरूतृ-वरूत्री-रुज्वलिति-क्षरिति-वमित्यमिति इति च इति।

यहाँ ग्रसित-स्कभित-स्तभितोत्तभित- यहाँ पर ग्रसु-स्कम्भु-स्तम्भुधातु के उकार की इत्संज्ञा होती है, इसलिए उनके उदित्त होने से इडागमाभाव करने पर प्रकृतसूत्र से उनकी इट्सहित रूपों का निपातन करते है। चत्त-विकस्ता-यहाँ दोनों धातुओं से क्तप्रत्यय करने पर और उनको वेद में इडागम करने पर प्राप्त प्रकृतसूत्र से वहां पर इडागम आभावविशिष्ट दो रूपों का निपातन करते है। विशस्तृ-शंस्तृ-शास्तृ इन धातुओं के तृच्परे होने पर और रक होने से इडागम प्राप्त करने पर प्रकृतसूत्र से उस इडागम अभाव में विशिष्ट रूपों का निपातन करते है। तरुतृ-तरूतृ-वरुतृ-वरूतृ-वरूत्री-यहाँ पर भी धातुओं को इडागम प्राप्त होने पर प्रकृतसूत्र से वहा निपातन से इडागम का निषेध करते है। उज्वलिति-क्षरिति-वमित्यमिति-यहाँ पर और उत्-पूर्वक ज्वल्-धातु को और क्षर्-वम्-अम्-इन धातुओं से परे शप्-प्रत्यय को प्रकृतसूत्र से इडागम का विधान करते है। यहाँ सूत्रार्थ होता है छन्द विषय में ग्रसितस्कभित-स्तभितोत्तभित-चत्त-विकस्ता-विशस्तृ-शंस्तृ-शास्तृ-तरुतृ-तरूतृ-वरुतृ- वरूतृ-वरूत्री-रुज्वलिति-क्षरिति-वम इन सभी के ये रूप निपातन से होते है।

उदाहरण- उत्तभितम्, चत्तम्, तरूता, क्षरिति।

सूत्रार्थसमन्वय- उत्पूर्वक स्तम्भु-धातु के उकार की इत्संज्ञा होने पर स्तम्भ-धातु के सकार

के स्थान में उद: स्थास्तम्भों: पूर्वस्य इससे आदे: परस्य इस परिभाषा के द्वारा परिष्कार करने से सकार के स्थान में स्थान आन्तर्य से थकार करने पर झरो झरि सवर्णे इससे उस थकार का लोप करने पर उत्तम्भ- धातु से क्त-प्रत्यय करने पर और अनुबन्धलोप होने पर उत्तम्भ् त इस स्थिति में अनिदिताम् हल उपधाया: क्ङिति इससे मकार का लोप होने पर यस्य विभाषा इससे निष्ठाक्तप्रत्यय को इडागम अभाव में प्रकृतसूत्र से उस क्तप्रत्यय को इडागम होने पर और प्रक्रिया के द्वारा **उत्तभितम्** यह रूप सिद्ध होता है। लोक में तो **उत्तब्धम्** यह रूप बनता है।

चत्-धातु से क्तप्रत्यय करने पर और अनुबन्धलोप होने पर चत् त इस स्थिति में क्तप्रत्यय की आर्धधातुक संज्ञा होने पर आर्धधातुकस्येड् वलादे: इससे धातु को इडागम प्राप्त होने पर प्रकृतसूत्र से उसका निषेध करने पर और प्रक्रिया कार्य के द्वारा चत्तम् रूप बनता है।

तृ-धातु से परे तृच्प्रत्यय करने पर और अनुबन्धलोप होने पर तृ तृ इस स्थिति में प्रकृतसूत्र से तृच: उट अनुबन्धलोप होने पर तृ उ तृ इस स्थिति में ऋकार को गुण अकार करने पर रपरत्व होने से त् अर् उ तृ इस स्थिति में तृच्-प्रत्यय की आर्धधातुकसंज्ञा होने से आर्धधातुकस्येड् वलादे: इस सूत्र से धातु को इडागम प्राप्त करने पर प्रकृतसूत्र से उसका निषेध करने पर और वर्णो के मिलान करने पर तरुतृ यह स्थिति होने पर प्रक्रिया कार्य करने पर तरुता यह रूप सिद्ध होता है। और ऊट करने पर तरूता यह रूप बनता है। लोक में तो तरिता यह रूप है।

क्षर्- धातु से कर्ता में लट तिप करने पर क्षर् ति इस स्थिति में धातु से शप्- प्रत्यय करने पर अनुबन्धलोप करने पर क्षर् अ ति इस स्थिति में प्रकृतसूत्र से शप के अकार को इकार करने पर और सभी वर्णो के मिलान करने पर **क्षरिति** यह वैदिक रूप सिद्ध होता है। लोक में तो **क्षरति** यह रूप है।

22.9 मीनातेर्निगमे॥ (7.3.81)

सूत्रार्थ– शित परे रहते ह्रस्व हो।

सूत्रावतरण- वेद में शित प्रत्यय के परे मी-धातु के अङ्ग को ह्रस्वविधान करने के लिए इस सूत्र की रचना की।

सूत्रव्याख्या– यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से ह्रस्व का विधान करते है। इस सूत्र में मीनाते: यह षष्ठ्यन्त पद है निगमे यह सप्तम्यन्त पद है। यहाँ प्वादीनां ह्रस्व: इस सूत्र से ह्रस्व: इस प्रथमान्त पद की, ष्ठिवु-क्लमु-चमां शिति इस सूत्र से शिति इस सप्तम्यन्त पद की अनुवृति है। अङ्गस्य इस षष्ठ्यन्त पद का यहाँ अधिकार है। और इस प्रकार यहाँ निगमे मीनाते: अङ्गस्य शिति ह्रस्व: इति पद योजना है। यहाँ मीनाते इस पद से मी-धातु का ग्रहण है। उससे यहाँ सूत्रार्थ होता है– वेद में मी-धातु अङ्ग को शित

प्रत्यय के परे ह्रस्व हो।

उदाहरण- प्रमिणन्ति।

सूत्रार्थसमन्वय- प्र-पूर्वक मीञ- धातु से कर्ता में लट में झि करने पर प्रमी झि इस स्थिति में झोऽन्तः इस सूत्र से झकार के स्थान में अन्त् आदेश होने पर प्रमी अन्त् इ इस स्थिति में क्र्यादिभ्यः श्ना इस सूत्र से धातु से श्नाप्रत्यय करने पर और अनुबन्ध लोप होने पर प्रमी ना अन्ति इस स्थिति में प्रकृतसूत्र से धातु से ईकार को ह्रस्व इकार करने पर श्नाभ्यस्तयोरातः इस सूत्र से ना- इसके आकार का लोप होने पर और श्नाप्रत्यय के नकार को णत्व णकार करने पर सभी वर्णों के मिलान करने पर प्रमिणन्ति यह रूप सिद्ध होता है।

22.10 बहुलं छन्दसि॥ (7.3.97)

सूत्रार्थ– छन्द में अस्तिसिच के परे अपृक्त को बहुल करके इट् हो।

सूत्रावतरण- छन्द विषय में अस्ति तथा सिच के परे अपृक्त को नित्य ईडागम प्राप्त होने पर उसको विकल्प से विधान करने के लिए अथवा निषेध करने के लिए इस सूत्र की रचना की है।

सूत्रव्याख्या– यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से इडागम का विधान करते है। इस सूत्र में बहुलम् यह प्रथमान्त पद है, छन्दसि यह सप्तमी एकवचनान्त पद है। यहाँ अस्तिसिचोऽपृक्ते इस सूत्र से अस्तिसिचः इस पञ्चम्यन्त पद की, अपृक्ते इस सप्तम्यन्त पद की, ब्रुव ईट् इस सूत्र से ईट् इस प्रथमान्त पद की अनुवृति है। यहाँ पदयोजना- छन्दसि अस्तिसिचः अपृक्ते बहुलम् ईट् इति। यहाँ अस्तिसिचः यहाँ पर पञ्चमीविधान होने से तस्मादित्युत्तरस्य इस परिभाषा के द्वारा अस्तिसिच से परे यह अर्थ प्राप्त होता है। उभयनिर्देशे पञ्चमीनिर्देशो बलीयान् इस परिभाषा के द्वारा यहाँ अस्तिसिच के परे अपृक्त का ईट् यह अर्थ प्राप्त होता है। सूत्रार्थ होता है- छन्द विषय में अस्ति तथा सिच के परे अपृक्तसंज्ञक प्रत्यय को बहुल करके ईट् हो। और इस सूत्र से सार्वधातुकसंज्ञक और अपृक्तसंज्ञक प्रत्यय को ईडागम होता। बहुलग्रहण से ईडागम कही पर होता है और कही पर नहीं होता है। बहुलम् क्या होता है तो कहा गया है। अपृक्त एकाल्प्रत्ययः इससे एकाल्प्रत्यय की अपृक्तसंज्ञा होती है। और उस अपृक्तसंज्ञक प्रत्यय को प्रकृतसूत्र से ईडागम होता है।

उदाहरण- आः। अक्षाः।

सूत्रार्थसमन्वय– अदादिगण में पढ़े होने से अस्-धातु से कर्ता में लङ तिप करने पर अस् ति इस स्थिति में अस्-धातु के शप का अदिप्रभृतिभ्यः शपः इस सूत्र से शप का लुक होने पर और धातु को आडागम और अनुबन्धलोप होने पर आ अस् ति इतश्च इससे इकार का लोप करने पर आ अस् त् इस स्थिति में अस्तिसिचोऽपृक्ते इससे तकार को ईडागम प्राप्त करने पर प्रकृतसूत्र से उसका निषेध करने पर आटश्च इससे वृद्धि

एकादेश करने पर आस् त् इस स्थिति में हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात् सुतिस्यपृक्तं हल् इससे तकार का लोप होने पर और विभक्तिकार्य करने पर **आः** यह रूप सिद्ध होता है। लोक में तो **आसीत्** यह रूप। इसी प्रकार अन्य जगह पर स्वयम् ऊह्यम् में भी जानना चाहिए।

और कही पर ईडागम होता है जैसे अभैषीर्मा पुत्रक इति।

22.11 नित्यं छन्दसि॥ (7.4.8)

सूत्रार्थ- छन्द विषय में चङ् उपधा के ऋवर्ण को ऋन्नित्य ही होता है।

सूत्राव्याख्या– यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से छन्द विषय में चङ् उपधा के ऋवर्ण को ऋत्व विधान करते है। इस सूत्र में दो पद है। नित्यम् यह अव्ययपद है। छन्दसि यह सप्तम्यन्त पद है। णौ चङ्युपधाया ह्रस्वः इस सूत्र से णौ चङ्युपधाया इन दो पद की अनुवृति है। उर्ङत् इस सुत्र से उः ऋत् इन दो पद की अनुवृति है। अङ्गस्य इस अधिकार में इस सूत्र को पढ़ा गया है। उससे सूत्रार्थ होता है छन्द विषय में चङ्–परे णी परे धातु की उपधा के ऋवर्ण को नित्य ऋकारादेश हो।

उदाहरण - अवीवृधात्।

सूत्रार्थसमन्वय- वृध्-धातु से णिच्प्रत्यय करने पर सनाद्यन्ता धातवः इस सूत्र से धातुसंज्ञा करने पर लुङ्लकार में तिप और अनुबन्धलोप होने पर वृध् इ ति इस स्थिति में च्लिप्रत्यय करने पर च्लि के स्थान में चङादेश और अनुबन्धलोप होने पर वृध् इ अ ति इस स्थिति में चङि इससे धातु को द्वित्व करने पर दो बार कहे गए पूर्वभाग की अभ्यास संज्ञा होने पर उरत् इससे अभ्यास के ऋकार को अकार करने पर रपरत्वे होने पर वर् ध् वृध् इ अ ति इस स्थिति में हलादिः शेषः इस सूत्र से आदिहल वकार के शेष रहने पर व वृध् इ अ ति इस स्थिति में चङ्प्रत्यय की आर्धधातुकसंज्ञा होने पर णेरणिटि इस सूत्र से णी का लोप होने पर धातु को अडागम प्रकृतसूत्र से करने पर ऋवर्ण के स्थान में ऋकारादेश होने पर और सन्वद्भाव करने पर सन्यतः इस सूत्र से अभ्यास के अकार को इकार करने पर दीर्घो लघोः इस सूत्र से इकार को दीर्घ करने पर इतश्च इससे तिप के इकार का लोप होने पर **अवीवृधत्** यह रूप सिद्ध होता है।

22.12 दुरस्युद्रविणस्युर्वृषण्यतिरिषण्यति॥

सूत्रार्थ– इनको क्यच निपातन करते है।

सूत्रव्याख्या– यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से कहे हुए पदों को क्यच निपातन करते है। इस सूत्र में एक ही पद है। ''क्यचि च'' इस सूत्र से क्यचि इस पद की अनुवृति

है। सूत्रार्थ होता है क्यच के परे दुरस्यु द्रविणस्यु वृषण्यति रिषण्यति इन पदों का निपातन करते है।

उदाहरण- दुरस्युः, द्रविणस्युः, वृषण्यति, रिषण्यति।

सूत्रार्थसमन्वय- दुष्टम् आत्मनः इच्छति इस अर्थ में दुष्टशब्द से ''सुप आत्मनः क्यच्'' इस सूत्र से क्यच्-प्रत्यय करने पर दुष्ट य इस स्थिति में प्रकृतसूत्र से दुष्टशब्द के स्थान में दुरस् इसका निपातन करते है। उससे ''क्याच्छन्दसि'' इस सूत्र से उप्रत्यय करने पर दुरस् य उ इस स्थिति में यचि भम् इससे भसंज्ञा करने पर ''यस्येति च'' इससे यकार से उत्तरवर्ति अकार का लोप होने पर दुरस्यु इस स्थिति में सुविभक्ति के परे **दुरस्युः** यह रूप बनता है। इसी प्रकार द्रविणशब्द से क्यच्-प्रत्यय करने पर **द्रविणस्युः** यह रूप बनता है। वृष् इस शब्द से क्यच्प्रत्यय करने पर निपातन होने से **वृषण्यति** यह रूप बनता है। रिष्टशब्द से क्यच्प्रत्यय करने पर निपातन से **रिषण्यति** यह रूप बनता है। भाषा में तो उप्रत्यय अभाव से यथाक्रम **दुष्टीयति, द्रविणीयति, वृषीयति, रिष्टीयति** ये रूप बनते है।

पाठगत प्रश्न-22.1

1. आज्जसेरसुक् इस सूत्र से किसका विधान करते है?
2. गोः पादान्ते इस सूत्र से किसका विधान करते है?
3. छन्दस्यपि दृश्यते इस सूत्रों से किसका विधान करते है?
4. हलादिविभक्ति के परे वेद में अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्ण को अनङ् किस सूत्र से होता है?
5. छन्दसि अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्णां शब्दों को किसके परे ईकारादेश होता है?
6. ऋकारान्त धातु को उकारादेश किस सूत्रों से होता है?
7. ह्वृ-धातु को किसके परे ह्रु-इत्यादेश होता है?
8. ग्रसित... इत्यादिसूत्र से कितने रूपों का निपातन करते है?
9. मीनातेर्निगमे इससे किस धातु को ह्रस्व होता है?
10. छन्द में किस से परे अपृक्त को ईडागम होता है?
11. अपृक्तसंज्ञा किस सूत्र से होती है?
12. नित्यं छन्दसि इस सूत्र से किसका विधान करते है?
13. रिषण्यति इसका लौकिक रूप क्या है?

22.13 विभाषा छन्दसि॥ (7.4.44)

सूत्रार्थ– छन्द में क्तिव के परे ओहाक त्यागे धातु को विकल्प से हि हो।

सूत्रव्याख्या– यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से छन्द विषय में क्तवाप्रत्यय के परे जहाते को विकल्प से हि आदेश का विधान करते है। इस सूत्र में दो पद है। विभाषा यह अव्ययपद है। छन्दसि यह सप्तम्यन्त पद है। यह सूत्र ''अङ्गस्य'' इसके अधिकार में पढ़ा गया है। ''दधातेर्हिः'' इस सूत्र से हिः इसकी अनुवृति है। और ''जहातेश्च क्त्वि'' इस सम्पूर्ण सूत्र की अनुवृति है। इसलिए सूत्रार्थ होता है छन्द विषय में क्त्वाप्रत्यय करने पर हाधातु को विकल्प से हि इत्यादेश होता है। ''अनेकाल्शित्सर्वस्य'' इस परिभाषा के द्वारा यह आदेश सम्पूर्ण हाधातु के स्थान पर होता है।

उदाहरण- हित्वा शरीरम्। हीत्वा वा।

सूत्रार्थसमन्वय– हाधातु को क्त्वाप्रत्यय के परे प्रकृतसूत्र से विकल्प से हाधातु को हि इत्यादेश होने पर हित्वा यह रूप बनता है। पक्ष में घुमास्थागापाजहातिसां हलि इस सूत्र से ईकारादेश करने पर हीत्वा यह रूप बनता है। छान्दस होने से ईकार अभाव में हात्वा यह रूप भी बनता है।

22.14 सुधितवसुधित नेमधितधिष्व धिषीय च॥ (7.4.45)

सूत्रार्थ- सु वसु नेम ये पूर्व धा धातु को क्तप्रत्यय के परे इत्व का निपातन करते है।

सूत्रव्याख्या– यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से इत्व का निपातन करते है। इस सूत्र में दो पद है। सुधितवसुधितनेमधितधिष्वधिषीय यह प्रथमान्त पद है। च यह अव्ययपद है। विभाषा छन्दसि इस सूत्र से छन्दसि इसकी अनुवृति है। सूत्रार्थ होता है छन्द विषय में सुधित वसुधित नेमधित धिष्व धिषीय इनका निपातन करते है। वहा पुनः क्तप्रत्यय के परे होने पर सु-वसु-नेमपूर्वक धाधातु को इकार निपातन करते है यह अर्थ जानना चाहिए। धीष्व धिषीय यहाँ पर भी धाधातु को इत्व निपातन करते है।

उदाहरण- गर्भं माता सुधितं दक्षिणासु। वसुधितमग्नौ। नेमधिता न पौंस्या।

सूत्रार्थसमन्वय- सु-पूर्वक धाधातु को क्तप्रत्यय करने पर प्रकृतसूत्र से निपातन होने से धाधातु को इत्व करने पर सुविभक्ति में सुधितम् यह रूप बनता है। इसी प्रकार वसुधितम्, नेमधितम् इन रूपों को भी जानना चाहिए।

धिष्व यहाँ पर धाधातु से लोट्लकार आत्मनेपद मध्यमपुरुष एकवचन में थास्-प्रत्यय करने पर प्रकृतसूत्र से निपातन होने से इत्व करने पर धि थास् इस स्थिति में थासः से इससे थास को से आदेश करने पर सकार से उत्तर ऐकार को सवाभ्यां वामौ इससे वकार

और सकार को षकार करने पर धिष्व यह रूप बनता है।

धिषीय यहाँ पर भी धाधातु से आशीर्लिङ उत्तमपुरुष एकवचन में आत्मनेपदसंज्ञक-इट्-विभक्ति को प्रकृतसूत्र से निपातन होने से इत्व करने पर धि इ इस स्थिति में इटोऽत् इस सूत्र से इकार को अकार करने पर लिङः सीयुट् इससे सीयुडागम होने पर सकार को षत्व करने पर **धिषीय** यह रूप बनता है।

22.15 दाधर्तिदर्धर्तिदर्धर्षिबोभूतुतेतिक्तेऽलर्ष्यापनीफणत्संस निष्यदत्क रिक्रत्कनिक्रदद्भरिभ्रद्दविध्वतोदविद्युतत्तरित्रतः सरीसृपतं वरीवृजन्मर्मृज्यागनीगन्तीति च॥ (7.4.42)

सूत्रार्थ– इन अट्ठारह का निपातन करते है।

सूत्रव्याख्या– यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से उक्तपदो का निपातन करते है। इस सूत्र में चार पद है। ''कृषेश्छन्दसि'' इस सूत्र से छन्दसि इसकी अनुवृति है। ''अत्र लोपोऽभ्यासस्य'' इस सूत्र से अभ्यासस्य इसकी अनुवृति है। अङ्गस्य इसका अधिकार आ रहा है। इस सूत्र से दाधर्ति इत्यादि अट्ठारह पदों का निपातन करते है।

उदाहरण- दाधर्ति, दधर्ति, दर्धर्षि इत्यादीनि।

सूत्रार्थसमन्वय- दाधर्ति-धृधातु से णिच्प्रत्यय करने पर लट धातु से आत्मनेपद में भी निपातन होने से परस्मैपद में तिप शप करने पर ''बहुलं छन्दसि'' इससे शप का श्लु होने पर ''णेरनिटि'' इससे णिच का लुक करने पर '' श्लौ'' इस सूत्र से धातु को द्वित्व करने पर धृ धृ ति इस स्थिति में दो बार कहे हुए प्रथम धृ इसकी ''पूर्वोऽभ्यासः'' इस सूत्र से अभ्याससंज्ञा होने पर ''उरत्'' इस सूत्र से ऋकार को अकार करने पर ''उरण् रपरः'' इस सूत्र से रपरत्व करने पर धर् धृ ति इस स्थिति में ''हलादिः शेषः'' इस सूत्र से अभ्यास के आदि हल धकार के शेष होने पर ''अभ्यासे चर्च'' इस सूत्र से धकार को चर्त्व दकार करने पर द धृ ति इस स्थिति में ''सार्वधातुकार्धधातुकयोः'' इस सूत्र से ऋकार को गुण रपरत्व करने पर द धर् ति इस स्थिति में निपातन से अभ्यास के अकार को दीर्घ करने पर दाधर्ति यह रूप बनता है।

दर्धर्ति- धृधातु से लट तिप शप और शप का श्लु करने पर धातु को द्वित्व करने पर अभ्यास को रुगागम करने पर प्रक्रिया के द्वारा दर्धर्ति यह रूप बनता है।

दर्धर्षि- धृधातु से लट तिप शप करने पर प्रक्रिया कार्य करने पर दर्धर्षि यह रूप बनता है।

बोभूतु- भूधातु से यङ्लुक लोट तिप करने पर यह रूप बनता है। यहाँ धातु को गुणाभाव का निपातन करते है। लोक में तो **बोभोतु** यह रूप होता है।

तेतिक्ते- तिज्धातु से यङ्लुक करने पर लोट करने पर आत्मनेपद में तप्रत्यय करने पर तेतिक्ते यह रूप है। यहाँ धातु से आत्मनेपद का निपातन करते है।

अलर्षि- ऋधातु से लट सिप का यह रूप है।

आपनीफणत्- आङ् इस उपसर्गपूर्वक फण्-धातु से यङ और यङ्लुक करने पर शतृप्रत्यय करने पर अभ्यास को नीगागम करने पर आपनीफणत् यह रूप बनता है। यहाँ नीक्-आगम का निपातन करते है।

संसनिष्यदत्- सम इत्युपसर्गपूर्वक स्यन्द्-धातु से यङ और यङ्लुक करने पर धातु को द्वित्व करने पर शतृप्रत्यय करने पर निगागम करने पर धातु के सकार को षत्व करने पर यह रूप बनता है। यहाँ निक्-आगम धातु के सकार को षत्व निपातन करते है।

करिक्रत्- कृधातु से यङ् और यङ्लुक शतृप्रत्यय करने पर धातु से द्वित्व और अभ्यासकार्य करने पर रिगागम करने पर करिक्रत् यह रूप बनता है। यहाँ कुहोश्चुः इस सूत्र से प्राप्त अभ्यास के ककार को चुत्व के अभाव का निपातन करते है। और रिक्-आगम भी निपातन करते है।

कनिक्रदत्- क्रन्द्-धातु से लुङ् तिप च्लि और च्लि को अङ करने पर धातु से द्वित्व करने पर निगागम और नलोप और इकारलोप करने पर कनिक्रदत् यह रूप बनता है। यहाँ अडाभाव, धातु को द्वित्व, अभ्यास को चुत्वाभाव, और निक्क्-आगम निपातन करते है।

भरिभ्रत्- भृधातु से यङ् यङ्लुक धातु से द्वित्व शतृप्रत्यय करने पर उरत् इस सूत्र से अभ्यास के ऋकार को अत्व रपरत्व करने पर भर् भृ अत् इस स्थिति में रेफ का लोप होने पर भ भृ अत् इस स्थिति में इत्वाभाव का, जश्त्वाभाव का, और अभ्यास को रिगागम प्रकृतसूत्र से निपातन से यणसंधि करने पर भरिभ्रत् यह रूप बनता है। भृञामित् इस सूत्र से इत्त्व की प्राप्ति, अभ्यासे चर्च इससे जश्त्व की प्राप्ति। उन दोनों का अभाव इससे निपातन करते है।

दविध्वतः- ध्वृधातु से यङ यङ्लुक करने पर धातु से द्वित्व करने पर शतृप्रत्यय करने पर अभ्यास को जश्त्व करने पर रिगागम और जस के सकार को रुत्व विसर्ग करने पर यह रूप बनता है। यहाँ धातु के ऋकारलोप और नुमाभाव का निपातन करते है।

दविद्युतत्- द्युत्-धातु से यङ् और यङ्लुक करने पर शतृप्रत्यय करने पर धातु को द्वित्व करने की प्रक्रिया के द्वारा यह रूप बनता है। यहाँ द्युतिस्वाप्योः सम्प्रसारणम् इस सूत्र से प्राप्त अभ्यास को सम्प्रसारण का अभाव, अभ्यास के उकार का और अकार का निपातन करते है।

तरित्रतः- तृधातु से शतृप्रत्यय करने पर शप धातु से तृ अ अत् इस अवस्था में व्यत्ययो बहुलम् इस सूत्र से शप को श्लु-आदेश होने पर श्लौ इस सूत्र से धातु को द्वित्व

करने पर उरत् इस सूत्र से अभ्यास के ऋकार को अकार करने पर रपरत्व होने पर हलादिः शेषः इस सूत्र से रेफ का लोप होने पर और निपातन से रिगागम करने पर प्रातिपदिकसंज्ञा में ङस करने पर तरित्रतः यह रूप है। यहाँ रिगागम निपातन करते है।

सरीसृपतम्- सृप्-धातु से शतृप्रत्यय करने पर अभ्यास को रिगागम होने पर अम्-विभक्ति का यह रूप है। यहाँ अभ्यास को रिगागम निपातन करते है।

वरीवृजत्- वृज्-धातु से शतृप्रत्यय करने पर और शप करने पर शप को श्लावादेश होने पर धातु से द्वित्व करने पर अभ्यास के ऋकार को अत्व रपरत्व करने पर वर्ज् वृज् अत् इस स्थिति में हलादिः शेषः इस सूत्र से रेफ के जकार का लोप होने पर निपातन से रीगागम होने पर वरीवृजत् यह रूप है। यहाँ रीगागम का निपातन करते है।

मर्मृज्य- मृज्-धातु से लिट तिप णल करने पर धातु से द्वित्व अभ्यास को ऋकार और अकार करने पर रपरत्व होने पर मर् ज मृज् अ इस स्थिति में हलादिः शेषः इस सूत्र से रेफ और जकार का लोप होने पर म मृज् अ इस स्थिति में निपातन से अभ्यास को रीगागम होने पर धातु से युगागम होने पर मर्मृज्य यह रूप बनता है। यहाँ अभ्यास को रीगागम धातु से युगागम निपातन के द्वारा किया जाता है। लोक में तो **ममार्ज** यह रूप है।

आगनीगन्ति- आङ्पूर्वक गम्धातु से लट तिप शप और शप का श्लु करने पर धातु से द्वित्व होने पर अभ्यास के मकार का लोप निपातन से अभ्यास को नीगागम करने पर सन्धि में आगनीगन्ति यह रूप है। यहाँ अभ्यास को कुहोश्चुः इस सूत्र से प्राप्त चुत्व का अभाव, और अभ्यास को नीगागम का निपातन करते है।

22.16 ससूवेति निगमे॥ (7.4.74)

सूत्रार्थ- सूतेर्लिट परस्मैपद को वुगागम और अभ्यास को अत्व निपातन किया जाता है।

सूत्रव्याख्या– यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में तीन पद है। ससूव यह प्रथमान्त पद है। इति यह अव्ययपद है। निगमे यह सप्तम्यन्त पद है। ''भवतेरः'' इस सूत्र से अः इसकी अनुवृति है। ''व्यथो लिटि'' इस सूत्र से लिटि की अनुवृति है। ''अत्र लोपोऽभ्यासस्य'' इस सूत्र से अभ्यास की अनुवृति है। यह सूत्र ''अङ्गस्य'' इसके अधिकार में पढ़ा गया है। सूत्र का अर्थ होता है हि सू-धातु से लिट परस्मैपद को वुगागम और अभ्यास को अत्व निपातन करते है।

उदाहरण- गृष्टिः ससूव स्थविरम्।

सूत्रार्थसमन्वय- सू-धातु से लिट निपातन होने से परस्मैपद में तिप करने पर और तिप को णल करने पर सू अ इस स्थिति में धातु को द्वित्व करने पर ह्रस्वः इससे अभ्यास के अच को ह्रस्व करने पर सु सू अ इस स्थिति में निपातन से अभास के उकार को अकार करने पर और वुगागम करने पर **ससूव** यह रूप होता है।

22.17 बहुलं छन्दसि॥

सूत्रार्थः– अभ्यास को इकार हो छन्द में।

सूत्रव्याख्या– यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से श्लु को बहुल करके इत् का विधान करते है। इस सूत्र में दो पद है। बहुलम् यह प्रथमान्त पद है। छन्दसि यह सप्तम्यन्त पद है। ''अत्र लोपोऽभ्यासस्य'' इस सूत्र से अभ्यासस्य इस पद की अनुवृति है। ''निजां त्रयाणां गुणः श्लौ'' इस सूत्र से श्लौ इस पद की अनुवृति है। ''भृञामित्'' इस सूत्र से इत् इसकी अनुवृति है। उससे सूत्रार्थ होता है छन्द विषय में श्लु के परे अभ्यास को बहुल करके इकार होता है। अलोऽन्त्यस्य इस परिभाषा के द्वारा अभ्यास के अन्त्य अल को ही इत्व होता है।

उदाहरण– पूर्णा विवष्टि।

सूत्रार्थसमन्वय– वश्–धातु से लट तिप शप करने पर वश्–धातु अदादि होने से अदिप्रभृतिभ्यः शपः इससे शप का लुक प्राप्त होने पर व्यत्यय से शप को श्लु होने पर धातु को द्वित्व करने पर वश् वश् ति इस स्थिति में अभ्यास के शकार का लोप होने पर व वश् ति इस स्थिति में प्रकृतसूत्र से अभ्यास के अकार को इकार करने पर वि वश् ति इस स्थिति में शकार को ''व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः'' इस सूत्र से षत्व करने पर **विवष्टि** यह रूप है।

पाठगत प्रश्न–22.2

14. ''विभाषा छन्दसि'' इस सूत्र से किसका विधान करते है?
15. हाधातु से क्त्वाप्रत्यय करने पर छन्द में कुछ रूप होते है। और वे कौनसे होते है?
16. सुधितम् यहाँ पर धाधातु से इत्त्व कैसे होता है?
17. धिषीय यह किस लकार में रूप होता है?
18. छन्द में सूधातु से लिट प्रथमपुरुष एकवचन में क्या रूप बनता है?
19. वश्–धातु से लिट में अभ्यास को इकार किस सूत्र से होता है?

पाठसार

लोक में जैसे अजादिविभक्ति के परे अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्णाम् अनङ्– आदेश होता है, वैसे ही वेद में भी होता है। यहाँ हलादि विभक्ति के परे भी छन्दस्यपि दृश्यते इस सूत्र

टिप्पणी

से अनङ्-आदेश का विधान दिखाई देता है। ई च द्विवचने इस सूत्र से अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्ण शब्दो कको द्विवचन के परे ईकारादेश का विधान करते है। ह्रु ह्वरेश्छन्दसि इस सूत्र से निष्ठा के परे ह्वृ-धातु के स्थान में ह्रु इत्यादेश होता है। ग्रसित-स्कभितादिसूत्र से छन्द में इट्सहित और इड्-रहित अट्ठारह रूपों का निपातन किया है। मीनातेर्निगमे इससे शित प्रत्यय के परे मीञ् धातु के ईकार को ह्रस्व का विधान करते है। बहुलं छन्दसि इससे छन्द में अस्तिसिच के परे अपृक्त का बहुल अर्थ में इडागम होता है। छन्द विषय में चङ् की उपधा ऋवर्ण को ऋत् नित्य होता है। छन्द में श्लु के परे अभ्यास को बहुल करके इकार आदेश होता है ''बहुलं छन्दसि'' इस सूत्र से जैसे- विवष्टि।

पाठान्त प्रश्न

1. अस्थभिः इस रूप को सिद्ध कीजिए।
2. ततुरिः इस रूप को सिद्ध कीजिए।
3. उत्तभितम् इस रूप को सिद्ध कीजिए।
4. प्रमिणन्ति इस रूप को सिद्ध कीजिए।
5. अक्षाः इस रूप को सिद्ध कीजिए।
6. अवीवृधत् इस रूप को सिद्ध कीजिए।
7. ''विभाषा छन्दसि'' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

22.1

1. आज्जसेरसुक् इस सूत्र से असुगागम का विधान करते है।
2. पादान्त गोशब्द को नुडागम का विधान करते है।
3. अस्थ्यादीनामनङ्
4. छन्दस्यपि दृश्यते।
5. द्विवचन में अजादि और हलादि विभक्ति के परे।
6. बहुलं छन्दसि।
7. निष्ठायाम्।

8. अट्ठारह।
9. मीञ्-धातु से।
10. अस्ति तथा सिच के परे।
11. अपृक्त एकाल्प्रत्ययः।
12. नित्यं छन्दसि सूत्र से छन्द विषय में चङ् उपधा के ऋवर्ण को ऋत्व का विधान करते है।
13. रिषण्यति इसका लौकिक रूप रिष्टीयति है।

22.2

14. ''विभाषा छन्दसि'' इस सूत्र से छन्द में क्त्वाप्रत्यय के परे जहाते को विकल्प से हि आदेश का विधान करते है।
15. हाधातु से छन्द में क्त्वाप्रत्यय करने पर तीन रूप होते है। हित्वा, हीत्वा और हात्वा।
16. सुधितम् यहाँ पर धाधातु से इत्व निपातन से होता है।
17. धिषीय यह आशार्लिङ्-लकार में रूप है।
18. छन्द में सूधातु से लिट प्रथमपुरुष एकवचन में ससूव यह रूप है।
19. वश्-धातु से लिट में अभ्यास के इकार को ''बहुलं छन्दसि'' इस सूत्र से होता है।

बाइसवाँ पाठ समाप्त